2.1.4. सृष्टिक्रम : सांख्य में प्रमेय पदार्थ मुख्यत: २ ही हैं। एक जड़ 'प्रकृति' दूसरा चेतन 'पुरुष'। सम जड़ जगत् इस जड़ प्रकृति का परिणाम है। इसी परिणाम का नाम सर्ग या सृष्टि है। सांख्यानुसार सृष्टि से पूर्व सत्त्व रज व तम ये तीनों गुण साम्यावस्था में रहते हैं। जब प्रकृति व पुरुष का पारस्परिक संयोग होता है, तब इन त्रिविध गुणों की साम्यावस्था में क्षोभ (विकार) उत्पन्न होता है। इसी को गुण 'क्षोभ' कहते हैं। पहले क्रियाशील रजोगुण में स्पन्दन होता है और उसके बाद सत् तथा तम आन्दोलित होते हैं। फलत: प्रकृति में भीषण आन्दोलन उत्पन्न होता है। ये तीनों गुण एक दूसरे को अपने भीतर समाहित करना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में गुणों की न्यूनाधिक्य की स्थिति पैदा होती है और गुणों के उसी न्यूनाधिक्य के अनुपात से नानाविध सांसारिक विषयों की उत्पत्ति होती है।

प्रकृतेर्महान् ततोऽहंकारस्तस्माद् गणश्च षोडशक: ।
तस्मादपि षोडशकात्पञ्चभ्य: पञ्चभूतानि ॥

उस कारण रूप त्रिगुणात्मक मूल प्रकृति से सर्वप्रथम बुद्धि तत्त्व का प्रादुर्भाव होता है बुद्धि तत्त्व से अहंकार, अहंकार से एक मन, ५ ज्ञानेन्द्रियाँ, ५ कर्मेन्द्रियाँ, ५ तन्मात्राएं इन सोलह तत्त्वों के समूह की अभिव्यक्ति होती है। इन १६ तत्त्वों के समूह में विद्यमान ५ तन्मात्राओं से ५ महाभूतों की अभिव्यक्ति होती है। यही सृष्टि है।

बुद्धि तत्व या महत् तत्व-

अध्यवसायो बुद्धिर्धर्मो ज्ञानं विराग ऐश्वर्यम् ।
सात्त्विकमेतद्रूपं तामसमस्माद्विपर्यस्तम् ॥

जिस तत्त्व के द्वारा (यह ऐसा है) निश्चय (अध्यवसाय) किया जाता है, वह बुद्धि या महत्तत्त्व कहलाता है। निश्चयात्मक वृत्ति का नाम बुद्धि है, बुद्धि का अर्थ है अपने सहित इष्टों को प्रकाशित करना। बुद्धि के २ प्रकार हैं- सात्विक व तामसिक। धर्म, ज्ञान, वैराग्य व ऐश्वर्य सात्विक बुद्धि के रूप हैं तथा इनके विपरीत अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य, अनैश्वर्य तामस बुद्धि के रूप हैं।

अहंकार-

अभिमानोऽहङ्कारस्तस्माद् द्विविधः प्रवर्तते सर्गः ।
एकादशकश्च गणस्तन्मात्रः पञ्चकश्चैव ॥
सात्त्विक एकादशकः प्रवर्तते वैकृतादहंकारात् ।
भूतादेस्तन्मात्रः स तामसस्तैजसादुभयम् ॥

अहंकार तब पैदा होता है, जब बुद्धितत्व में रजोगुण प्रबल होता है। यह अहंकार बुद्धि का विकार है। बुद्धि तत्त्व की ही भाँति यह भी त्रिगुणात्मक है- सात्विक अहंकार- तामस अहंकार - राजस अहंकार। जिस अहंकार में सत्त्वगुण की प्रधानता होती है, उसे 'वैकृत' कहते हैं तथा उससे ग्यारह इन्द्रियों की उत्पत्ति होती है। १ मन + ५ ज्ञानेन्द्रियाँ+ ५ कर्मेन्द्रियाँ। जिस अहंकार में तमोगुण की प्रधानता होती है, उसे 'भूतादि' कहते हैं तथा उससे ५ तन्मात्राओं की सृष्टि होती है। राजस् अहंकार को 'तैजस' कहते हैं। उसमें रजोगुण का प्राधान्य होता है। यह उभयात्मक है, दोनों का सहायक है।

इन्द्रियाँ

बुद्धीन्द्रियाणि **चक्षुः श्रोत्रं घ्राण**-रसनत्वगाख्यानि ।
वाक् पाणिपादपायूपस्थानि कर्मेन्द्रियाण्याहुः ॥

चक्षु-श्रोत्र-घ्राण-त्वचा-रसना ये ५ ज्ञानेन्द्रियाँ अथवा बुद्धीन्द्रियाँ है।(इनके विषय क्रमशः है- रूप-शब्द-गन्ध-रस-स्पर्श।) वाक्-पाणि-पाद- पायु-उपस्थ ये ५ कर्मेन्द्रियाँ है। ये १० इन्द्रियाँ सात्विक अहंकार से उत्पन्न हुई हैं। आत्मा इनका अधिष्ठाता है। इन्द्रियाँ प्रत्यक्ष अवयवों में रहती हुई भी अप्रत्यक्ष रहती हैं। अतः अनुमेय होती हैं।

मनः-

उभयात्मकमत्रमनः संकल्पकमिन्द्रियञ्च **साधर्म्यात्** ।
गुण-परिणाम-विशेषान्नानात्वं **बाह्यभेदाश्च** ॥

मन उभयात्मक इन्द्रिय है। वह ज्ञानेन्द्रिय के संसर्ग से ज्ञानेन्द्रिय व कर्मेन्द्रिय के साथ कार्य करते समय कर्मेन्द्रिय का रूप धारण कर लेता है। मन संकल्प करने वाला है (संकल्प विकल्पात्मक)। अन्य १० इन्द्रियों के साधर्म्य होने के कारण इसे इन्द्रिय कहा जाता है। (तन्मात्रादि) अनेक बाह्य कार्यों के समान गुणों के परिणाम विशेष के कारण इन्द्रियों में विविधता आ जाती है। (भाव यह है कि जब सात्विक अहंकार एक ही है, तब उससे अनेक अर्थात् ११ इन्द्रियों का आविर्भाव कैसे हुआ? तब उत्तर देते हैं कि रजोगुण, तमोगुण, सत्व गुण निरन्तर परिणाम प्राप्त करते रहते हैं, इस गुणों के परिणाम वैचित्र्य से इन्द्रियों में वैसे ही अनेकता आ जाती है। जैसे एक (भूतादि) तामस अहंकार से गुण परिणाम विशेष नामक सहकारी के भेद से शब्द, स्पर्श, रूपादि, तन्मात्र अभिव्यक्त होते हैं। ऐसे ही सात्विक अहंकार से ही विलक्षण अनेक इन्द्रियों के अविर्भवन में कोई बाधा नहीं आती है।

महाभूतः-

तन्मात्राण्यविशेषास्तेभ्यो **भूतानि पञ्च पञ्चभ्यः** ।
एते स्मृता विशेषाः शान्ताः घोराश्च मूढाश्च ॥

५ तन्मात्राओं को अविशेष (सूक्ष्म) तथा ५ महाभूतों को विशेष (स्थूल) कहा जाता है। अभिव्यक्त ये ५ महाभूत (स्थूल-विशेष) जो कि तन्मात्राओं से अभिव्यक्त होते हैं- रूप-तेज, रस-जल, गंध-पृथ्वी, स्पर्ष-वायु,

शब्द-आकाश ये स्थूलभूत सुखरूप (शांत), दु:खरूप (घोर) व मोहरूप (जड़) होते हैं। न्यायवैशेषिक में इन्हें परमाणु कहा गया है।

★ प्रकृति से लेकर ५ महाभूत पर्यन्त उत्पत्ति को जिस क्रम से दिखाया गया है, उसकी दो अवस्थाएं होती है। प्रत्ययसर्ग या बुद्धिसर्ग तथा तन्मात्रसर्ग या भौतिकसर्ग। प्रत्यय सर्ग में बुद्धि, अहंकार व एकादश इन्द्रियों का आविर्भाव होता है। तन्मात्र या भौतिक सर्गावस्था में तन्मात्राओं पंचमहाभूतों व उनके विकारों का आविर्भाव होता है। यह सांख्यीय सृष्टि की उत्पत्ति का क्रम है।

★ जिस क्रम से सृष्टि की उत्पत्ति होती है, ठीक उसके विपरीत क्रम में जब कार्य कारण में लीन हो जाते हैं, तब विनाश की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसी कारण इन विकारों को 'लिंग' कहते हैं। पंच महाभूत कार्य अपने कारण ५ तन्मात्र में, ५ तन्मात्ररूप कार्य अपने कारण अहंकार में, अहंकार (कार्य) अपने कारण महत् (बुद्धि में) तथा बुद्धि अपने कारण प्रकृति में विलीन हो जाती है, तिरोभूत हो जाती है। प्रकृति २३ तत्त्वों का पूर्ण है, वह किसी का कार्य नहीं है, यदि प्रकृति का भी कोई कारण माना जाय तो अनवस्था दोष का प्रसंग आ जायेगा। अत: इससे बचने के लिए बीजाङ्कुर न्याय से प्रकृति को ही सबका मूल कारण माना गया है। इस प्रकार सृष्टि क्रम के विपरीत कार्य का कारण में विलय तिरोभवन होना ही सांख्यानुसार विनाश है।

★ सांख्य में प्रकृति व पुरुष दो विरोधी सत्ता स्वीकार की है। इनका संयोग अन्धे व लंगड़े की भांति विशेष संयोग है। प्रकृति दर्शनार्थ पुरुष की अपेक्षा करती है और पुरुष कैवल्यार्थ अपना स्वरूप पहचानने के लिए प्रकृति की सहायता लेता है-

पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य ।
पङ्ग्वन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृत: सर्ग: ॥

★ प्रकृति व पुरुष इन दो विरोधी स्वतन्त्र-तत्त्वों का वास्तविक संयोग नहीं होता बल्कि पुरुष 'सन्निधमात्र' ही प्रकृति की गुण साम्यावस्था में विक्षोभ उत्पन्न करता है।

★ प्रकृति व प्रकरण दोनों में वास्तविक संयोग न होकर संयोगाभास ही होता है। इस आभास से सृष्टि होती है। पुरुष बुद्धि में प्रतिबिम्बित होता है और भ्रमवश उसी को अपना वास्तविक स्वरूप समझने लगता है। पुरुष के इसी प्रतिबिंब का संयोग प्रकृति से होता है, पुरुष के वास्तविक स्वरूप से नहीं। जब यह शंका होती है कि बुद्धि तो प्रकृति का प्रथम विकार है, अत: वह जन्म से पहले ही पुरुष का प्रतिबिंब कैसे ग्रहण करती है ? उत्तर देते हैं कि पुरुष प्रकृति में स्वत: प्रतिबिंबित होता है। अत: प्रकृति पुरुष के संयोग से विकास प्रक्रिया आरंभ होती है।

2.1.5. प्रत्यय सर्ग: इन्द्रियों की सृष्टि - सांख्य सत्कार्यवादी दर्शन है, इसके अनुसार सृष्टि का मूलकारण प्रकृति है और प्रकृति से ही परिणाम परम्परा से इस सृष्टि की उत्पत्ति हुई है। प्रकृति से लेकर ५ महाभूतों तक जो विचारधारा चलती है, उसको हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं। ज्ञानवृत्ति या बुद्धिवृत्ति अथवा प्रत्यय सर्ग तथा पंच तन्मात्र व पंच महाभूत, जिसके विकास को तन्मात्र या भौतिक सर्ग कहते हैं।

★ मूलाप्रकृति से आविर्भूत बुद्धि और उसका विकास अहंकार एवं अहंकार से उसका एकादश इन्द्रियाँ बुद्धि सर्ग के अंग है। बुद्धि का धर्म है निश्चय करना। **इस बुद्धि के सात्विक रूप से धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य की उत्पत्ति होती है।** धर्म के २ भेद है (१) अभ्युदय साधक (२) नि:श्रेयस् साधक। ज्ञान भी बाह्य आभ्यन्तर के भेद से दो प्रकार का है, बाह्य ज्ञान-शिक्षाकल्पादि सम्बन्धी, आभ्यन्तर ज्ञान-प्रकृति पुरुष विवेक। वैराग्य दृष्टानुश्रविकविषय 'वितृष्णा' को कहते हैं। यह भी 'यतमान', 'व्यतिरेक' 'एकेन्द्रिय' व 'वशीकार' के भेद से चतुर्विध है। ऐश्वर्य में

अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व और कामावसायित्व हैं। अधर्मादि में इसका विपर्यय हैं-

अध्यवसायो बुद्धिर्धर्मो ज्ञानं विराग ऐश्वर्यम् ।
सात्त्विकमेतद्रूपं तामसमस्माद् **विपर्यस्तम् ॥**

★ उपर्युक्त धर्माऽधर्मादि ८ भावों का संक्षेप में ४ भागों में वर्गीकरण कर दिया गया है-

एष प्रत्ययसर्गो विपर्ययाऽशक्ति-तुष्टिसिद्ध्याख्यः ।
गुण-वैषम्यविमर्दात् **तस्य च भेदास्तु पञ्चाशत् ॥**

"विपर्यय-अशक्ति-तुष्टि-सिद्धि ये चार बुद्धि के संक्षिप्त परिणाम है-(प्रत्यय सर्ग है)।" 'विपर्यय में अज्ञान', 'अशक्ति' में 'अनैश्वर्य', 'अवैराग्य' व 'अधर्म'। 'तुष्टि' में 'धर्म' 'वैराग्य' 'ऐश्वर्य'। 'सिद्धि' में 'ज्ञान' का अन्तर्भाव होता है। ये विपर्ययादि बुद्धि के परिणाम हैं। गुणों की विषमता से उत्पन्न उपमद अर्थात् एक-एक या दो-दो न्यून बल वालों के अभिनव से उस बुद्धि के ५० भेद हो जाते हैं, जो निम्न प्रकार हैं-

पंच विपर्ययभेदा भवन्त्यशक्तिश्च करणवैकल्यात् ।
अष्टाविंशति **भेदा, तुष्टिर्नवधाऽष्टधा सिद्धिः ॥**

★ विपर्यय के ५ प्रभेद होते हैं। इन्द्रियादि करणों की क्षति से उत्पन्न अशक्ति के २८ प्रभेद। तुष्टि के ९ प्रभेद। सिद्धि के ८ प्रभेद है।

★ विपर्यय के ५ भदों का सूक्ष्मतम भेद-तम, मोह, महामोह, तामिस्र, अन्धतामिस्र अथवा अविद्या अस्मिता राग द्वेष अभिनिवेश हैं।

भेदस्तमसोऽष्टविधो मोहस्य च दशविधो महामोहः।
तामिस्रोऽष्टादशधा, तथा भवत्यन्धतामिस्रः॥

तम-अविद्या के ८ प्रकार हैं। आत्मभिन्न प्रकृति, महत्, अहंकार आदि में आत्मभावना करना अविद्या या तम होता है।

मोह-मोह या अस्मिता भी ८ प्रकार की है। अणिमादि अष्टसिद्धियों के लाभ या पुरुष-बुद्धि को एक समझना मोह या अस्मिता है।

महामोह-अथवा राग, दिव्यादि भेद से २० प्रकार का है। सुख की तृष्णा, विषयों में उत्कट इच्छा को भी राग कहते हैं।

तामिस्र- १८ प्रकार का ऐश्वर्य या दिव्यादिव्य शब्दादि १० विषयों में से किसी के ऊपर यदि अप्रीति हो गयी हो तो उसके प्रति द्वेष अथवा वैरबुद्धि का नाम द्वेष या तामिस्र है।

अन्धतामिस्र-तामिस्र द्वेष के १८ विषयों को प्राप्त करने का प्रबल आग्रह तथा प्राप्त्युपरान्त भोगकालिक विनाश का भय अभिनिवेश से इस प्रकार ५ प्रकार का विपर्यय सूक्ष्म भेदों से ६२ प्रकार का है।

★ अशक्ति के २८ भेद

एकादशेन्द्रियवधाः **सह बुद्धिवधैरशक्तिरुद्दिष्टा ।**
सप्तदशवधा बुद्धेर्विपर्ययात्तुष्टि-सिद्धीनाम् ॥

११-इन्द्रियवध - (बधिर, कुष्ठ आदि) तथा १७ बुद्धि वधों को मिलाकर 'अशक्ति' कहलाती है। १७ बुद्धिभावों में ९ तुष्टि तथा ८ सिद्धियाँ होती हैं। उनका अभाव तथा अभिभव मिलकर १७ बुद्धि भाव होते हैं।

अर्थात् इनमें प्रकृतितुष्टि, कालतुष्टि, उपादानातुष्टि, भाग्यातुष्टि, शब्दोपरमा, स्पर्शोपरमा, रूपोपरमा, रसोपरमा, गन्धोपरमा इनके अभाव अर्थ प्रकृत्यातुष्टि, कालातुष्टि, उपादानतुष्टि, भाग्यातुष्टि, शब्दोपरमातुष्टि, स्पर्शोपरमातुष्टि, रूपोपरमातुष्टि, रसोपरमातुष्टि, गन्धोपरमातुष्टि होती है। इसी तरह से ऊह शब्द अध्ययन आध्यात्मिक, आधिभौतिक अधिदैविक है। दु:ख विघात, सुहृत्प्राप्ति और दान नामक ८ सिद्धियाँ भी अशक्ति में अनूह, अनध्ययन, आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक व दु:खत्रिधान असुहृत् प्राप्ति तथा अदान, अशब्द में परिणत होकर आमरण की सूचना देती है। तुष्टि के ९ भेद हैं-

आध्यात्मिक्यश्चतस्र: प्रकृत्युपादान-काल-भागाख्या: ।
बाह्या विषयोपरमात् पञ्चनव तुष्टयोऽभिमता: ॥

आभ्यन्तर व बाह्य भेद से ९ तुष्टियाँ हैं-

१. प्रकृति तुष्टि- मोक्ष उपायों में आयी विमुखता का आ जाना तुष्टि कहलाती है। यद्यपि पुरुष के भेद ज्ञान से ही मुक्ति होती है, यह सिद्धान्त है, तथापि किसी अल्पज्ञ गुरु द्वारा इस उपदेश से कि विवेक साक्षात्कार प्रकृति का कार्य है, अत: प्रकृति ही मुक्ति देगी, इसके लिये ध्यान, समाधि की आवश्यकता है। ऐसा सन्तोष हो जाने में इसे प्रकृति तुष्टि कहते हैं।

२. उपादान तुष्टि - इस सलिल तुष्टि भी कहते हैं। यद्यपि विवेक ज्ञान से तुष्टि होती है, परन्तु वह प्रकृति मात्र से नहीं होती। अत: सन्यास लेने से ही विवेक ज्ञान होता है, ध्यानादि की आवश्यकता नहीं। इस प्रकार के उपदेश से प्राप्त तुष्टि उपादान तुष्टि होती है।

३. कालतुष्टि - इसे ओघ भी कहते हैं। सन्यासशीघ्रापवर्ग दायी नहीं है। वह कालान्तर में परिपक्व होकर ही तुम्हें विवेक देगा। उद्विग्नता से लाभ नहीं, ऐसे उपदेश से प्राप्त तुष्टि काल तुष्टि होती है।

४. भाग्य तुष्टि - विवेक ज्ञान व प्रकृति व काल, व सन्यास से वह केवल भाग्य से मिलता है। जैसे मदालसा पुत्रों का बाल्यावस्था में विवेक हो गया है।

★ ५,६,७,८ दु:खत्रय विनाशरूप आध्यात्मिक दु:ख विनाश (प्रमोद), अधिभौतिक दु:ख अभाव (मुदित) आधिदैविक अभावरूप (मोदमान) कहलाती है।

★ ये ८ सिद्धियाँ मोक्ष दीपिका हैं। सिद्धि पूर्व विषयादि अन्तराय या बाधक स्वरूप है। इनका अतिक्रमण करके ही सिद्धि प्राप्त होती है। जिस प्रकार कैवल्य प्राप्त करने के लिए प्रकृति पुरुष विवेक ख्याति और विवेक ख्याति के लिए प्रकृति व उससे उत्पन्न सभी वस्तुओं का ज्ञान आवश्यक है-उसी प्रकार सिद्धि प्राप्त करने के लिए प्रार्थमिक दशा, उनसे अन्तराय (बाधक) आदि का ज्ञान आवश्यक है। यही प्रत्यय सर्ग या बुद्धि सर्ग है।

बाह्य विषयोपरात् पञ्च - शब्दादि ५ विषयों से ५ बाह्य तुष्टियाँ होती है। इन तुष्टियों के ये ही कारण हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध के अर्जन में कष्ट, अर्जित के रक्षण में कष्ट, रक्षणकाल में विनाश की आशंका से कष्ट, विषयोपभोग के समय भोग की अशक्ति तथा भोग अत्यधिक बढ जाने से कष्ट तथा हिंसा के बिना शब्दादि के अर्जन नहीं हो सकने से कष्ट, जब इन क्लेशों को सोचकर ऐसे ५ प्रकार के सन्तोष हो जाते हैं तो चित्त विषय से निवृत्त हो जाता हैं। इनके योग दर्शन में दूसरे नाम इस प्रकार (१) अमा (२) सलिल (३) ओघ (४) सृष्टि (५) पार (६) सुपार (७) पारापार (८) अनुत्तमाम्भ (९) उत्तमाम्भ।

अष्ट सिद्धि

ऊह: शब्दोऽध्ययनं दु:खविघातास्त्रय: सुहृत्प्राप्ति: ।
दानं च सिद्धयोऽष्टौ सिद्धे: पूर्वोऽङ्कुशस्त्रिविध: ॥

ऊह-शब्द-अध्ययन-विविध दुःखविनाश-सुहृत् प्राप्ति-दान, ये ८ सिद्धियाँ है।

१. **अध्ययन** - शास्त्रप्रोक्त गुरुमुख से अध्यात्म विद्या का पारायण श्रवण अध्ययन नामक प्रथम सिद्धि है, जो संसार तरण का प्रथम हेतु लेने से **'तार'** कहलाती है।

२. **शब्द** - अध्ययन का कार्य शब्द है। कार्य में कारण के आरोप द्वारा शब्द पद के शब्दोत्पन्न अर्थ ज्ञान सूचित होता है। यह दूसरी सिद्धि है, सुखकारक संसारतारक होने से यह **'सुतार'** कहलाती है।

३. **ऊह**- शास्त्रानुकूल युक्तियों से शास्त्रोक्त विषय की परीक्षा ऊह है। यह सन्दिग्ध पूर्व पक्ष के परित्याग द्वारा उत्तरपक्ष या सिद्धान्त की स्थापना है। इसे ही मनन भी कहते हैं। यह सिद्धि अध्ययन व शब्द से अधिक तारक होने के कारण **'तार तार'** कहलाती है।

४. **सुहृत्प्राप्ति** - साधक स्वयं परीक्षित (युक्तियों) व सिद्धान्तों में तब तक विश्वास नहीं करता, जब तक कि गुरु, शिष्य सहपाठियों से संवाद नहीं करता। इसलिए सुहृदों का संवाद प्राप्त होना सुहृत् प्राप्ति है। शास्त्रार्थ संवाद से रमणीक होने के कारण यह **'रम्यक'** कहलाती है।

५. **दान** - ज्ञानाभ्यासोत्पन्न शुद्ध विवेकख्याति दान है। सार्वकालिक आनन्द का हेतु होने से यह **'सदामुदित'** कहलाती है।

प्रत्यय सर्ग

(107) महत् (बुद्धि) → सात्विक - ज्ञान, धर्म, वैराग्य, ऐश्वर्य
→ तामसिक - अज्ञान, अधर्म अवैराग्य अनैश्वर्य

} इन 8 का अन्तर्भाव निम्नलिखित चार के अन्तर्गत हो जाता है।

- विपर्यय (अज्ञान 5)
  - तम (8) अविद्या
  - मोह (8) अस्मिता
  - महामोह (10) राग
  - तामिस्र (18) द्वेष
  - अन्धतामिस्र (18) अभिनिवेश
- अशक्ति (अधर्म, अविराग, अनैश्वर्य 28)
  - इन्द्रिय वध (विकलता) (11)
    - ज्ञान वैकल्य (5)
      - बाधिर्य
      - कुण्ठता
      - अन्धत्व
      - जड़ता
      - अजिघ्रता
    - कर्म व्यैकल्य (5)
      - मूकता
      - कौण्ड्य
      - पंगुत्व
      - क्लैब्य
      - उदावर्त
    - उभयेन्द्रिय वैकल्य (1)
      - मन्दता
  - बुद्धिवध (17)
    - तुष्टि अभाव (9)
      - प्रकृत्यतुष्टि
      - कालातुष्टि
      - उपादानतुष्टि
      - भाग्यातुष्टि
      - शब्दोपरमातुष्टि
      - स्पर्शोपरमातुष्टि
      - कपोपरमातुष्टि
      - रसोपरमातुष्टि
      - गन्धोपरमातुष्टि
    - सिद्धि अभाव (8)
      - अनध्ययन
      - अशब्द
      - अनूह
      - असुहृत्प्राप्ति
      - अदान
      - आध्यात्मिक्
      - आ०भौ०
      - आ० दैविक दु:खत्रिधान (सिद्धि अभाव के भेद)
- तुष्टि (धर्म, वैराग्य ऐश्वर्य 9)
  - आभ्यन्तर (4)
    - प्रकृतितुष्टि
    - उपादानतुष्टि
    - कालतुष्टि
    - भाग्यतुष्टि
  - बाह्य (5)
    - शब्दोपरम
    - स्पर्शोपरम
    - रूपोपरम
    - रसोपरम
    - गन्धोपरम
- सिद्धि (ज्ञान) (8)
  - अध्ययन (तार)
  - शब्द (सुतार)
  - ऊह (तारतार)
  - सुहृत् प्राप्ति (रम्यक)
  - दान (सदामुदित)
  - आध्यात्मिक दु:ख विनाश (प्रमोद)
  - आधिभौतिक दु:ख विनाश (मुदित)
  - आधिदैविक दु:ख विनाश (मोदमान)

5+28+9+8=50 भेदात्मक प्रत्यय सर्ग